

संभोग : अहं-शून्यता की झलक

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक सुबह, अभी सूरज भी निकला नहीं था और एक मांझी नदी के किनारे पहुंच गया था। उसका पैर किसी चीज से टकरा गया। झुक कर उसने देखा, पत्थरों से भरा हुआ एक झोला पड़ा था। उसने अपना जाल किनारे पर रख दिया, वह सुबह सूरज के उगने की प्रतीक्षा करने लगा। सूरज उग आए, वह अपना जाल फेंके और मछलियां पकड़े। वह जो झोला उसे पड़ा हुआ मिल गया था, जिसमें पत्थर थे, वह एक-एक पत्थर निकाल कर शांत नदी में फेंकने लगा। सुबह के सन्नाटे में उन पत्थरों के गिरने की छपाक की आवाज सुनता, फिर दूसरा पत्थर फेंकता।

धीरे-धीरे सुबह का सूरज निकला, रोशनी हुई। तब तक उसने झोले के सारे पत्थर फेंक दिए थे, सिर्फ एक पत्थर उसके हाथ में रह गया था। सूरज की रोशनी में देखते से ही जैसे उसके हृदय की धड़कन बंद हो गई, सांस रुक गई। उसने जिन्हें पत्थर समझ कर फेंक दिया था, वे हीरे-जवाहरात थे! लेकिन अब तो अंतिम हाथ में बचा था टुकड़ा और वह पूरे झोले को फेंक चुका था। वह रोने लगा, चिल्लाने लगा। इतनी संपदा उसे मिल गई थी कि अनंत जन्मों के लिए काफी थी, लेकिन अंधेरे में, अनजान, अपरिचित, उसने उस सारी संपदा को पत्थर समझ कर फेंक दिया था।

लेकिन फिर भी वह मछुआ सौभाग्यशाली था, क्योंकि अंतिम पत्थर फेंकने के पहले सूरज निकल आया था और उसे दिखाई पड़ गया था कि उसके हाथ में हीरा है। साधारणतः सभी लोग इतने सौभाग्यशाली नहीं होते हैं। जिंदगी बीत जाती है, सूरज नहीं निकलता, सुबह नहीं होती, रोशनी नहीं आती और सारे जीवन के हीरे हम पत्थर समझ कर फेंक चुके होते हैं।

जीवन एक बड़ी संपदा है, लेकिन आदमी सिवाय उसे फेंकने और गंवाने के कुछ भी नहीं करता है! जीवन क्या है, यह भी पता नहीं चल पाता और हम उसे फेंक देते हैं! जीवन में क्या छिपा था--कौन से राज, कौन सा रहस्य, कौन सा स्वर्ग, कौन सा आनंद, कौन सी मुक्ति--उस सबका कोई भी अनुभव नहीं हो पाता और जीवन हमारे हाथ से रिक्त हो जाता है!

इन आने वाले तीन दिनों में जीवन की संपदा पर ये थोड़ी सी बातें मुझे कहनी हैं। लेकिन जो लोग जीवन की संपदा को पत्थर मान कर बैठ गए हैं, वे कभी आंख खोल कर देख पाएंगे कि जिन्हें उन्होंने पत्थर समझा है वे हीरे-माणिक हैं, यह बहुत कठिन है। और जिन लोगों ने जीवन को पत्थर मान कर फेंकने में ही समय गंवा दिया है, अगर आज उनसे कोई कहने जाए कि जिन्हें तुम पत्थर समझ कर फेंक रहे थे वहां हीरे-मोती भी थे, तो वे नाराज होंगे, क्रोध से भर जाएंगे। इसलिए नहीं कि जो बात कही गई वह गलत है, बल्कि इसलिए कि यह बात इस बात का स्मरण दिलाती है कि उन्होंने बहुत सी संपदा फेंक दी है।

लेकिन चाहे हमने कितनी ही संपदा फेंक दी हो, अगर एक क्षण भी जीवन का शेष है तो फिर भी हम कुछ बचा सकते हैं और कुछ जान सकते हैं और कुछ पा सकते हैं। जीवन की खोज में कभी भी इतनी देर नहीं होती कि कोई आदमी निराश होने का कारण पाए।

लेकिन हमने यह मान ही लिया है--अंधेरे में, अज्ञान में--कि जीवन में कुछ भी नहीं है सिवाय पत्थरों के! जो लोग ऐसा मान कर बैठ गए हैं, उन्होंने खोज के पहले ही हार स्वीकार कर ली है।

मैं इस हार के संबंध में, इस निराशा के संबंध में, इस मान ली गई पराजय के संबंध में सबसे पहली चेतावनी यह देना चाहता हूं कि जीवन मिट्टी और पत्थर नहीं है। जीवन में बहुत कुछ है। जीवन के मिट्टी-पत्थर के बीच भी बहुत कुछ छिपा है। अगर खोजने वाली आंखें हों, तो जीवन से वह सीढ़ी भी निकलती है जो परमात्मा तक पहुंचती है।

इस शरीर में भी--जो देखने पर हड्डी, मांस और चमड़ी से ज्यादा नहीं है--वह छिपा है जिसका हड्डी, मांस और चमड़ी से कोई भी संबंध नहीं है। इस साधारण सी देह में भी--जो आज जन्मती है, कल मर जाती है और मिट्टी हो जाती है--उसका वास है जो अमृत है, जो कभी जन्मता नहीं और कभी समाप्त भी नहीं होता है। रूप के भीतर अरूप छिपा है; और दृश्य के भीतर अदृश्य का वास है; और मृत्यु के कुहासे में अमृत की ज्योति छिपी हुई है। मृत्यु के धुएं में अमृत की लौ भी छिपी हुई है, वह फ्लेम, वह ज्योति भी छिपी हुई है, जिसकी कोई मृत्यु नहीं है।

लेकिन हम धुएं को देख कर ही वापस लौट आते हैं और ज्योति को नहीं खोज पाते हैं। या जो लोग थोड़ी हिम्मत करते हैं, वे धुएं में ही खो जाते हैं और ज्योति तक नहीं पहुंच पाते हैं। यह यात्रा कैसे हो सकती है कि हम धुएं के भीतर छिपी हुई ज्योति को जान सकें, शरीर के भीतर छिपी हुई आत्मा को पहचान सकें, प्रकृति के भीतर छिपे हुए परमात्मा के दर्शन कर सकें? यह कैसे हो सकता है? उस संबंध में ही तीन चरणों में मुझे बात करनी है।

पहली बात, हमने जीवन के संबंध में ऐसे दृष्टिकोण बना लिए हैं, हमने जीवन के संबंध में ऐसी धारणाएं बना ली हैं, हमने जीवन के संबंध में ऐसा फलसफा खड़ा कर रखा है कि उस दृष्टिकोण और धारणा के कारण ही जीवन के सत्य को देखने से हम वंचित रह जाते हैं। हमने मान ही लिया है कि जीवन क्या है--बिना खोजे, बिना पहचाने, बिना जिज्ञासा किए। हमने जीवन के संबंध में कोई निश्चित बात ही समझ रखी है।

हजारों वर्षों से हमें एक ही बात मंत्र की तरह पढ़ाई जा रही है कि जीवन असार है, जीवन व्यर्थ है, जीवन दुख है। सम्मोहन की तरह हमारे प्राणों पर यह मंत्र दोहराया गया है कि जीवन व्यर्थ है, जीवन असार है, जीवन दुख है, जीवन छोड़ देने योग्य है। यह बात, सुन-सुन कर धीरे-धीरे हमारे प्राणों में पत्थर की तरह मजबूत होकर बैठ गई है। इस बात के कारण जीवन असार दिखाई पड़ने लगा है, जीवन दुख दिखाई पड़ने लगा है। इस बात के कारण जीवन ने सारा आनंद, सारा प्रेम, सारा सौंदर्य खो दिया है। मनुष्य एक कुरूपता बन गया है। मनुष्य एक दुख का अड्डा बन गया है।

और जब हमने यह मान ही लिया है कि जीवन व्यर्थ है, असार है, तो उसे सार्थक बनाने की सारी चेष्टा भी बंद हो गई हो तो आश्चर्य नहीं है। अगर हमने यह मान ही लिया है कि जीवन एक कुरूपता है, तो उसके भीतर सौंदर्य की खोज कैसे हो सकती है? और अगर हमने यह मान ही लिया है कि जीवन सिर्फ छोड़ देने योग्य है, तो जिसे छोड़ ही देना है, उसे सजाना, उसे खोजना, उसे निखारना, इसकी कोई भी जरूरत नहीं है।

हम जीवन के साथ वैसा व्यवहार कर रहे हैं, जैसा कोई आदमी स्टेशन पर विश्रामालय के साथ व्यवहार करता है, वेटिंग रूम के साथ व्यवहार करता है। वह जानता है कि क्षण भर हम इस वेटिंग रूम में ठहरे हुए हैं, क्षण भर बाद छोड़ देना है, इस वेटिंग रूम से प्रयोजन क्या है? अर्थ क्या है? वह वहां मूंगफली के छिलके भी

डालता है, पान भी थूक देता है, गंदा भी करता है और फिर भी सोचता है, मुझे क्या प्रयोजन है? क्षण भर बाद मुझे चले जाना है।

जीवन के संबंध में भी हम इसी तरह का व्यवहार कर रहे हैं। जहां से हमें क्षण भर बाद चले जाना है, वहां सुंदर और सत्य की खोज और निर्माण करने की जरूरत क्या है?

लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं, जिंदगी जरूर हमें छोड़ कर चले जाना है, लेकिन जो असली जिंदगी है, उसे हमें कभी भी छोड़ने का कोई उपाय नहीं है। हम यह घर छोड़ देंगे, यह स्थान छोड़ देंगे; लेकिन जो जिंदगी का सत्य है, वह सदा हमारे साथ होगा, वह हम स्वयं हैं। स्थान बदल जाएंगे, मकान बदल जाएंगे, लेकिन जिंदगी? जिंदगी हमारे साथ होगी। उसके बदलने का कोई उपाय नहीं।

और सवाल यह नहीं है कि जहां हम ठहरे थे उसे हमने सुंदर किया था, जहां हम रुके थे वहां हमने प्रीतिकर हवा पैदा की थी, जहां हम दो क्षण को ठहरे थे वहां हमने आनंद का गीत गाया था। सवाल यह नहीं है कि वहां आनंद का गीत हमने गाया था। सवाल यह है कि जिसने आनंद का गीत गाया था, उसने भीतर आनंद की और बड़ी संभावनाओं के द्वार खोल लिए; जिसने उस मकान को सुंदर बनाया था, उसने और बड़े सौंदर्य को पाने की क्षमता उपलब्ध कर ली है; जिसने दो क्षण उस वेटिंग रूम में भी प्रेम के बिताए थे, उसने और बड़े प्रेम को पाने की पात्रता अर्जित कर ली है।

हम जो करते हैं, उसी से हम निर्मित होते हैं। हमारा कृत्य अंततः हमें निर्मित करता है, हमें बनाता है। हम जो करते हैं, वही धीरे-धीरे हमारे प्राण और हमारी आत्मा का निर्माता हो जाता है। जीवन के साथ हम क्या कर रहे हैं, इस पर निर्भर करेगा कि हम कैसे निर्मित हो रहे हैं। जीवन के साथ हमारा क्या व्यवहार है, इस पर निर्भर होगा कि हमारी आत्मा किन दिशाओं में यात्रा करेगी, किन मार्गों पर जाएगी, किन नये जगत्‌ों की खोज करेगी।

जीवन के साथ हमारा व्यवहार हमें निर्मित करता है--यह अगर स्मरण हो, तो शायद जीवन को असार, व्यर्थ मानने की दृष्टि हमें भ्रांत मालूम पड़े, तो शायद हमें जीवन को दुखपूर्ण मानने की बात गलत मालूम पड़े, तो शायद हमें जीवन से विरोधी रुख अधार्मिक मालूम पड़े।

लेकिन अब तक धर्म के नाम पर जीवन का विरोध ही सिखाया गया है। सच तो यह है कि अब तक का सारा धर्म मृत्युवादी है, जीवनवादी नहीं। उसकी दृष्टि में, मृत्यु के बाद जो है वही महत्वपूर्ण है, मृत्यु के पहले जो है वह महत्वपूर्ण नहीं है! अब तक के धर्म की दृष्टि में मृत्यु की पूजा है, जीवन का सम्मान नहीं! जीवन के फूलों का आदर नहीं, मृत्यु के कुम्हला गए, जा चुके, मिट गए फूलों की कब्रों की प्रशंसा और श्रद्धा है! अब तक का सारा धर्म चिंतन करता है कि मृत्यु के बाद क्या है--स्वर्ग, मोक्ष! मृत्यु के पहले क्या है, उससे आज तक के धर्म को जैसे कोई संबंध नहीं रहा।

और मैं आपसे कहना चाहता हूं: मृत्यु के पहले जो है, अगर हम उसे ही समझालने में असमर्थ हैं, तो मृत्यु के बाद जो है उसे हम समझालने में कभी भी समर्थ नहीं हो सकते। मृत्यु के पहले जो है, अगर वही व्यर्थ छूट जाता है, तो मृत्यु के बाद कभी भी सार्थकता की कोई गुंजाइश, कोई पात्रता हम अपने में पैदा नहीं कर सकेंगे। मृत्यु की तैयारी भी, इस जीवन में जो आज पास है, मौजूद है, उसके द्वारा करनी है। मृत्यु के बाद भी अगर कोई लोक है, तो उस लोक में हमें उसी का दर्शन होगा, जो हमने जीवन में अनुभव किया है और निर्मित किया है। लेकिन जीवन को भुला देने की, जीवन को विस्मरण कर देने की बात ही अब तक कही गई है।

मैं आपसे कहना चाहता हूँ: जीवन के अतिरिक्त न कोई परमात्मा है, न हो सकता है।

मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूँ: जीवन को साध लेना ही धर्म की साधना है और जीवन में ही परम सत्य को अनुभव कर लेना मोक्ष को उपलब्ध कर लेने की पहली सीढ़ी है। जो जीवन को ही चूक जाता है, वह और सब भी चूक जाएगा, यह निश्चित है।

लेकिन अब तक का रुख उलटा रहा है। वह रुख कहता है, जीवन को छोड़ो। वह रुख कहता है, जीवन को त्यागो। वह यह नहीं कहता कि जीवन में खोजो। वह यह नहीं कहता कि जीवन को जीने की कला सीखो। वह यह भी नहीं कहता कि जीवन को जीने के ढंग पर निर्भर करता है कि जीवन कैसा मालूम पड़ेगा। अगर जीवन अंधकारपूर्ण मालूम पड़ता है, तो वह जीने का गलत ढंग है। यही जीवन आनंद की वर्षा भी बन सकता है, अगर जीने का सही ढंग उपलब्ध हो जाए।

धर्म को मैं जीने की कला कहता हूँ। वह आर्ट ऑफ लिविंग है।

धर्म जीवन का त्याग नहीं, जीवन की गहराइयों में उतरने की सीढ़ियाँ हैं।

धर्म जीवन की तरफ पीठ कर लेना नहीं, जीवन की तरफ पूरी तरह आँख खोलना है।

धर्म जीवन से भागना नहीं, जीवन को पूरा आलिंगन में लेने का नाम है।

धर्म है जीवन का पूरा साक्षात्कार।

यही शायद कारण है कि आज तक के धर्म में सिर्फ बूढ़े लोग ही उत्सुक रहे हैं। मंदिरों में जाएं, चर्चों में, गिरजाघरों में, गुरुद्वारों में—और वहाँ वृद्ध लोग दिखाई पड़ेंगे। वहाँ युवा दिखाई नहीं पड़ते, वहाँ छोटे बच्चे दिखाई नहीं पड़ते। क्या कारण है? एक ही कारण है। अब तक का हमारा धर्म सिर्फ बूढ़े का धर्म है। उन लोगों का धर्म है, जिनकी मौत करीब आ गई, और अब जो मौत से भयभीत हो गए हैं और मौत के बाद के चिंतन के संबंध में आतुर हैं और जानना चाहते हैं कि मौत के बाद क्या है।

जो धर्म मौत पर आधारित है, वह धर्म पूरे जीवन को कैसे प्रभावित कर सकेगा? जो धर्म मौत का चिंतन करता है, वह पृथ्वी को धार्मिक कैसे बना सकेगा? वह नहीं बना सका। पाँच हजार वर्षों की धार्मिक शिक्षा के बाद भी पृथ्वी रोज अधार्मिक से अधार्मिक होती चली गई है। मंदिर हैं, मस्जिद हैं, चर्च हैं, पुजारी हैं, पुरोहित हैं, संन्यासी हैं, लेकिन पृथ्वी धार्मिक नहीं हो सकी है और नहीं हो सकेगी, क्योंकि धर्म का आधार ही गलत है। धर्म का आधार जीवन नहीं है, धर्म का आधार मृत्यु है। धर्म का आधार खिलते हुए फूल नहीं हैं, कब्रें हैं। जिस धर्म का आधार मृत्यु है, वह धर्म अगर जीवन के प्राणों को स्पंदित न कर पाता हो तो आश्चर्य क्या है? जिम्मेवारी किसकी है?

मैं इन तीन दिनों में जीवन के धर्म के संबंध में ही बात करना चाहता हूँ और इसलिए पहला सूत्र समझ लेना जरूरी है। और इस सूत्र के संबंध में आज तक छिपाने की, दबाने की, भूल जाने की सारी चेष्टा की गई है; लेकिन जानने और खोजने की नहीं! और उस भूलने और विस्मृत कर देने की चेष्टा के दुष्परिणाम सारे जगत में व्याप्त हो गए हैं।

मनुष्य के सामान्य जीवन में केंद्रीय तत्व क्या है—परमात्मा? आत्मा? सत्य?

नहीं! मनुष्य के प्राणों में, सामान्य मनुष्य के प्राणों में, जिसने कोई खोज नहीं की, जिसने कोई यात्रा नहीं की, जिसने कोई साधना नहीं की, उसके प्राणों की गहराई में क्या है—प्रार्थना? पूजा?

नहीं, बिल्कुल नहीं! अगर हम सामान्य मनुष्य की जीवन-ऊर्जा में खोज करें, उसकी जीवन-शक्ति को हम खोजने जाएं, तो न तो वहां परमात्मा दिखाई पड़ेगा, न पूजा, न प्रार्थना, न ध्यान। वहां कुछ और ही दिखाई पड़ेगा। और जो दिखाई पड़ेगा, उसे भुलाने की चेष्टा की गई है, उसे जानने और समझने की नहीं!

वहां क्या दिखाई पड़ेगा अगर हम आदमी के प्राणों को चीरें और फाड़ें और वहां खोजें? आदमी को छोड़ दें, अगर आदमी से इतर जगत की भी हम खोज-बीन करें, तो वहां प्राणों की गहराइयों में क्या मिलेगा? अगर हम एक पौधे की जांच-बीन करें, तो क्या मिलेगा? एक पौधा क्या कर रहा है?

एक पौधा पूरी चेष्टा कर रहा है नये बीज उत्पन्न करने की। एक पौधे के सारे प्राण, सारा रस, नये बीज इकट्ठे करने, जन्मने की चेष्टा कर रहा है।

एक पक्षी क्या कर रहा है? एक पशु क्या कर रहा है?

अगर हम सारी प्रकृति में खोजने जाएं तो हम पाएंगे: सारी प्रकृति में एक ही, एक ही क्रिया जोर से प्राणों को घेर कर चल रही है और वह क्रिया है सतत सृजन की क्रिया। वह क्रिया है क्रिएशन की क्रिया। वह क्रिया है जीवन को पुनरुज्जीवित, नये-नये रूपों में जीवन देने की क्रिया। फूल बीज को सम्हाल रहे हैं, फल बीज को सम्हाल रहे हैं। बीज क्या करेगा? बीज फिर पौधा बनेगा, फिर फूल बनेगा, फिर फल बनेगा। अगर हम सारे जीवन को देखें, तो जीवन जन्मने की एक अनंत क्रिया का नाम है। जीवन एक ऊर्जा है, जो स्वयं को पैदा करने के लिए सतत संलग्न है और सतत चेष्टाशील है।

आदमी के भीतर भी वही है। आदमी के भीतर उस सतत सृजन की चेष्टा का नाम हमने सेक्स दे रखा है, काम दे रखा है। इस नाम के कारण उस ऊर्जा को एक गाली मिल गई, एक अपमान। इस नाम के कारण एक निंदा का भाव पैदा हो गया है। मनुष्य के भीतर भी जीवन को जन्म देने की सतत चेष्टा चल रही है। हम उसे सेक्स कहते हैं, हम उसे काम की शक्ति कहते हैं।

लेकिन काम की शक्ति क्या है?

समुद्र की लहरें आकर टकरा रही हैं समुद्र के तट से हजारों-लाखों वर्षों से। लहरें चली आती हैं, टकराती हैं, लौट जाती हैं। फिर आती हैं, टकराती हैं, लौट जाती हैं। जीवन भी हजारों वर्षों से अनंत-अनंत लहरों में टकरा रहा है। जरूर जीवन कहीं उठना चाहता है। ये समुद्र की लहरें, जीवन की ये लहरें कहीं ऊपर पहुंचना चाहती हैं; लेकिन किनारों से टकराती हैं और नष्ट हो जाती हैं। फिर नई लहरें आती हैं, टकराती हैं और नष्ट हो जाती हैं। यह जीवन का सागर इतने अरबों वर्षों से टकरा रहा है, संघर्ष ले रहा है, रोज उठता है, गिर जाता है। क्या होगा प्रयोजन इसके पीछे? जरूर इसके पीछे कोई वृहत्तर ऊंचाइयां छूने का आयोजन चल रहा है। जरूर इसके पीछे कुछ और गहराइयां जानने का प्रयोजन चल रहा है। जरूर जीवन की सतत प्रक्रिया के पीछे कुछ और महानतर जीवन पैदा करने का प्रयास चल रहा है।

मनुष्य को जमीन पर आए बहुत दिन नहीं हुए, कुछ लाख वर्ष हुए। उसके पहले मनुष्य नहीं था, लेकिन पशु थे। पशुओं को आए हुए भी बहुत ज्यादा समय नहीं हुआ। एक जमाना था कि पशु भी नहीं थे, लेकिन पौधे थे। पौधों को आए भी बहुत समय नहीं हुआ। एक समय था कि पौधे भी नहीं थे, पत्थर थे, पहाड़ थे, नदियां थीं, सागर था।

पत्थर, पहाड़, नदियों की वह जो दुनिया थी, वह किस बात के लिए पीड़ित थी?

वह पौधों को पैदा करना चाहती थी। पौधे धीरे-धीरे पैदा हुए। जीवन ने एक नया रूप लिया। पृथ्वी हरियाली से भर गई। फूल खिले।

लेकिन पौधे भी अपने में तृप्त नहीं थे। वे सतत जीवन को जन्म देते रहे। उनकी भी कोई चेष्टा चल रही थी। वे पशुओं को, पक्षियों को जन्म देना चाहते थे।

पशु-पक्षी पैदा हुए। हजारों-लाखों वर्षों तक पशु-पक्षियों से भरा हुआ था यह जगत। लेकिन मनुष्य का कोई पता न था। पशुओं और पक्षियों के प्राणों के भीतर निरंतर मनुष्य भी निवास कर रहा था, पैदा होने की चेष्टा कर रहा था। फिर मनुष्य पैदा हुआ। अब मनुष्य किसलिए है?

मनुष्य निरंतर नये जीवन को पैदा करने के लिए आतुर है। हम उसे सेक्स कहते हैं, हम उसे काम की वासना कहते हैं, लेकिन उस वासना का मूल अर्थ क्या है? मूल अर्थ इतना है: मनुष्य अपने पर समाप्त नहीं होना चाहता, आगे भी जीवन को पैदा करना चाहता है। लेकिन क्यों? क्या मनुष्य के प्राणों में, मनुष्य से ऊपर किसी सुपरमैन को, किसी महामानव को पैदा करने की कोई चेष्टा चल रही है?

निश्चित ही चल रही है। निश्चित ही मनुष्य के प्राण इस चेष्टा में संलग्न हैं कि मनुष्य से श्रेष्ठतर जीवन जन्म पा सके, मनुष्य से श्रेष्ठतर प्राणी आविर्भूत हो सके। नीत्शे से लेकर अरविंद तक, पतंजलि से लेकर बर्ट्रेण्ड रसेल तक, सारे मनुष्यों के प्राणों में एक कल्पना एक सपने की तरह बैठी रही है कि मनुष्य से बड़ा प्राणी कैसे पैदा हो सके!

लेकिन मनुष्य से बड़ा प्राणी पैदा कैसे होगा? हमने तो हजारों वर्ष से इस पैदा होने की कामना को ही निंदित कर रखा है। हमने तो सेक्स को सिवाय गाली के आज तक दूसरा कोई सम्मान नहीं दिया। हम तो बात करने में भयभीत होते हैं। हमने तो सेक्स को इस भांति छिपा कर रख दिया है जैसे वह है ही नहीं, जैसे उसका जीवन में कोई स्थान नहीं है। जब कि सच्चाई यह है कि उससे ज्यादा महत्वपूर्ण मनुष्य के जीवन में और कुछ भी नहीं है। लेकिन उसको छिपाया है, उसको दबाया है। दबाने और छिपाने से मनुष्य सेक्स से मुक्त नहीं हो गया, बल्कि मनुष्य और भी बुरी तरह से सेक्स से ग्रसित हो गया। दमन उलटे परिणाम लाया है।

शायद आपमें से किसी ने एक फ्रेंच वैज्ञानिक कुए के एक नियम के संबंध में सुना होगा। वह नियम है: लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट। कुए ने एक नियम ईजाद किया है, विपरीत परिणाम का नियम। हम जो करना चाहते हैं, हम इस ढंग से कर सकते हैं कि जो हम परिणाम चाहते थे, उससे उलटा परिणाम हो जाए।

एक आदमी साइकिल चलाना सीखता है। बड़ा रास्ता है, चौड़ा रास्ता है, एक छोटा सा पत्थर रास्ते के किनारे पड़ा हुआ है। वह साइकिल चलाने वाला घबराता है कि मैं कहीं उस पत्थर से न टकरा जाऊं। अब इतना चौड़ा रास्ता है कि अगर आंख बंद करके भी वह चलाए, तो पत्थर से टकराना आसान बात नहीं है। इसके सौ में एक ही मौके हैं कि वह पत्थर से टकराए। इतने चौड़े रास्ते पर कहीं से भी निकल सकता है। लेकिन वह देख कर घबराता है--कहीं मैं पत्थर से टकरा न जाऊं! और जैसे ही वह घबराता है--मैं पत्थर से न टकरा जाऊं--सारा रास्ता विलीन हो गया, सिर्फ पत्थर ही दिखाई पड़ने लगता है उसको। अब उसकी साइकिल का चाक पत्थर की तरफ मुड़ने लगता है। वह हाथ-पैर से घबराता है। उसकी सारी चेतना उस पत्थर को ही देखने लगती है। और एक सम्मोहित, हिप्रोटाइज्ड आदमी की तरह वह पत्थर की तरफ खिंचा जाता है और जाकर पत्थर से टकरा जाता है। नया साइकिल सीखने वाला उसी से टकरा जाता है जिससे बचना चाहता है! लैंप पोस्ट से टकरा जाता है, पत्थर से टकरा जाता है। इतना बड़ा रास्ता था कि अगर कोई निशानेबाज ही चलाने की कोशिश करता, तो उस पत्थर से टकरा सकता था। लेकिन यह सिक्खड़ आदमी कैसे उस पत्थर से टकरा गया?

कुए कहता है, हमारी चेतना का एक नियम है--लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट। हम जिस चीज से बचना चाहते हैं, चेतना उसी पर केंद्रित हो जाती है और परिणाम में हम उसी से टकरा जाते हैं।

पांच हजार वर्षों से आदमी सेक्स से बचना चाह रहा है और परिणाम इतना हुआ है कि गली-कूचे, हर जगह, जहां भी आदमी जाता है, वहीं सेक्स से टकरा जाता है। वह लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट मनुष्य की आत्मा को पकड़े हुए है।

क्या कभी आपने यह सोचा कि आप चित्त को जहां से बचाना चाहते हैं, चित्त वहीं आकर्षित हो जाता है, वहीं निमंत्रित हो जाता है! जिन लोगों ने मनुष्य को सेक्स के विरोध में समझाया, उन लोगों ने ही मनुष्य को कामुक बनाने का जिम्मा भी अपने ऊपर ले लिया है। मनुष्य की अति कामुकता गलत शिक्षाओं का परिणाम है। और आज भी हम भयभीत होते हैं कि सेक्स की बात न की जाए! क्यों भयभीत होते हैं? भयभीत इसलिए होते हैं कि हमें डर है कि सेक्स के संबंध में बात करने से लोग और कामुक हो जाएंगे।

मैं आपको कहना चाहता हूं, यह बिल्कुल ही गलत भ्रम है। यह शत प्रतिशत गलत है। पृथ्वी उसी दिन सेक्स से मुक्त होगी, जब हम सेक्स के संबंध में सामान्य, स्वस्थ बातचीत करने में समर्थ हो जाएंगे। जब हम सेक्स को पूरी तरह से समझ सकेंगे, तो ही हम सेक्स का अतिक्रमण कर सकेंगे।

जगत में ब्रह्मचर्य का जन्म हो सकता है, मनुष्य सेक्स के ऊपर उठ सकता है, लेकिन सेक्स को समझ कर, सेक्स को पूरी तरह पहचान कर। उस ऊर्जा के पूरे अर्थ, मार्ग, व्यवस्था को जान कर उससे मुक्त हो सकता है। आंखें बंद कर लेने से कोई कभी मुक्त नहीं हो सकता। आंखें बंद कर लेने वाले सोचते हैं कि आंख बंद कर लेने से शत्रु समाप्त हो गया है, तो वे पागल हैं। मरुस्थल में शत्रुमर्ग भी ऐसा ही सोचता है। दुश्मन हमले करते हैं तो शत्रुमर्ग रेत में सिर छिपा कर खड़ा हो जाता है और सोचता है कि जब दुश्मन मुझे दिखाई नहीं पड़ रहा तो दुश्मन नहीं है। लेकिन यह तर्क—शत्रुमर्ग को हम क्षमा भी कर सकते हैं, आदमी को क्षमा नहीं किया जा सकता।

सेक्स के संबंध में आदमी ने शत्रुमर्ग का व्यवहार किया है आज तक। वह सोचता है, आंख बंद कर लो सेक्स के प्रति तो सेक्स मिट गया।

अगर आंख बंद कर लेने से चीजें मिटती होतीं, तो बहुत आसान थी जिंदगी, बहुत आसान होती दुनिया। आंखें बंद करने से कुछ मिटता नहीं, बल्कि जिस चीज के संबंध में हम आंखें बंद करते हैं, हम प्रमाण देते हैं कि हम उससे भयभीत हो गए हैं, हम डर गए हैं। वह हमसे ज्यादा मजबूत है, उससे हम जीत नहीं सकते हैं, इसलिए हम आंख बंद करते हैं। आंख बंद करना कमजोरी का लक्षण है।

और सेक्स के बावत सारी मनुष्य-जाति आंख बंद करके बैठ गई है। न केवल आंख बंद करके बैठ गई है, बल्कि उसने सब तरह की लड़ाई भी सेक्स से ली है। और उसके परिणाम, उसके दुष्परिणाम सारे जगत में ज्ञात हैं।

अगर सौ आदमी पागल होते हैं, तो उसमें से अट्ठानवे आदमी सेक्स को दबाने की वजह से पागल होते हैं। अगर हजारों स्त्रियां हिस्टीरिया से परेशान हैं, तो उसमें सौ में से निन्यानवे स्त्रियों के हिस्टीरिया के, मिरगी के, बेहोशी के पीछे सेक्स की मौजूदगी है, सेक्स का दमन मौजूद है। अगर आदमी इतना बेचैन, अशांत, इतना दुखी और पीड़ित है, तो इस पीड़ित होने के पीछे उसने जीवन की एक बड़ी शक्ति को बिना समझे उसकी तरफ पीठ खड़ी कर ली है, उसका कारण है। और परिणाम उल्टे आते हैं।

अगर हम मनुष्य का साहित्य उठा कर देखें, अगर किसी देवलोक से कभी कोई देवता आए या चंद्रलोक से या मंगल ग्रह से कभी कोई यात्री आए और हमारी किताबें पढ़े, हमारा साहित्य देखे, हमारी कविताएं पढ़े, हमारे चित्र देखे, तो बहुत हैरान हो जाएगा। वह हैरान हो जाएगा यह जान कर कि आदमी का सारा साहित्य सेक्स ही सेक्स पर क्यों केंद्रित है? आदमी की सारी कविताएं सेक्सुअल क्यों हैं? आदमी की सारी कहानियां,

सारे उपन्यास सेक्स पर क्यों खड़े हैं? आदमी की हर किताब के ऊपर नंगी औरत की तस्वीर क्यों है? आदमी की हर फिल्म नंगे आदमी की फिल्म क्यों है? वह आदमी बहुत हैरान होगा; अगर कोई मंगल से आकर हमें इस हालत में देखेगा तो बहुत हैरान होगा। वह सोचेगा, आदमी सेक्स के सिवाय क्या कुछ भी नहीं सोचता? और आदमी से अगर पूछेगा, बातचीत करेगा, तो बहुत हैरान हो जाएगा। आदमी बातचीत करेगा आत्मा की, परमात्मा की, स्वर्ग की, मोक्ष की। सेक्स की कभी कोई बात नहीं करेगा! और उसका सारा व्यक्तित्व चारों तरफ से सेक्स से भरा हुआ है! वह मंगल ग्रह का वासी तो बहुत हैरान होगा। वह कहेगा, बातचीत कभी नहीं की जाती जिस चीज की, उसको चारों तरफ से तृप्त करने की हजार-हजार पागल कोशिशें क्यों की जा रही हैं?

आदमी को हमने परवर्त किया है, विकृत किया है और अच्छे नामों के आधार पर विकृत किया है। ब्रह्मचर्य की बात हम करते हैं। लेकिन कभी इस बात की चेष्टा नहीं करते कि पहले मनुष्य की काम की ऊर्जा को समझा जाए, फिर उसे रूपांतरित करने के प्रयोग भी किए जा सकते हैं। बिना उस ऊर्जा को समझे दमन की, संयम की सारी शिक्षा, मनुष्य को पागल, विक्षिप्त और रुग्ण करेगी। इस संबंध में हमें कोई भी ध्यान नहीं है! यह मनुष्य इतना रुग्ण, इतना दीन-हीन कभी भी न था; इतना विषाक्त भी न था, इतना पाय.जनस भी न था, इतना दुखी भी न था।

मैं एक अस्पताल के पास से निकलता था। मैंने एक तख्ते पर अस्पताल की एक सूचना लिखी हुई पढ़ी। लिखा था उस तख्ती पर--एक आदमी को बिच्छू ने काटा, उसका इलाज किया गया, वह एक दिन में ठीक होकर घर वापस चला गया है। एक दूसरे आदमी को सांप ने काटा था, उसका तीन दिन में इलाज किया गया, वह स्वस्थ होकर घर वापस लौट गया है। उस पर तीसरी सूचना थी कि एक और आदमी को पागल कुत्ते ने काट लिया था। उसका दस दिन से इलाज हो रहा है। वह काफी ठीक हो गया है और शीघ्र ही उसके पूरी तरह ठीक हो जाने की उम्मीद है। और उस पर एक चौथी सूचना भी थी कि एक आदमी को एक आदमी ने काट लिया था। उसे कई सप्ताह हो गए, वह बेहोश है, और उसके ठीक होने की भी कोई उम्मीद नहीं है! मैं बहुत हैरान हुआ। आदमी का काटा हुआ इतना जहरीला हो सकता है?

लेकिन अगर हम आदमी की तरफ देखेंगे तो दिखाई पड़ेगा--आदमी के भीतर बहुत जहर इकट्ठा हो गया है। और उस जहर के इकट्ठे हो जाने का पहला सूत्र यह है कि हमने आदमी के निसर्ग को, उसकी प्रकृति को स्वीकार नहीं किया। उसकी प्रकृति को दबाने और जबरदस्ती तोड़ने की चेष्टा की है। मनुष्य के भीतर जो शक्ति है, उस शक्ति को रूपांतरित करने की, ऊंचा ले जाने की, आकाशगामी बनाने का हमने कोई प्रयास नहीं किया। उस शक्ति के ऊपर हम जबरदस्ती कब्जा करके बैठ गए हैं। वह शक्ति नीचे से ज्वालामुखी की तरह उबल रही है और धक्के दे रही है। वह आदमी को किसी भी क्षण उलटा देने की चेष्टा कर रही है। और इसीलिए जरा सा मौका मिल जाता है, तो आपको पता है सबसे पहली बात क्या होती है?

अगर एक हवाई जहाज गिर पड़े तो आपको सबसे पहले, उस हवाई जहाज में अगर पायलट हो और आप उसके पास जाएं, उसकी लाश के पास, तो आपको पहला प्रश्न क्या उठेगा मन में? क्या आपको ख्याल आएगा--यह हिंदू है या मुसलमान? नहीं। क्या आपको ख्याल आएगा कि यह भारतीय है कि चीनी? नहीं। आपको पहला ख्याल आएगा--यह आदमी है या औरत? पहला प्रश्न आपके मन में उठेगा--यह स्त्री है या पुरुष? क्या आपको ख्याल है इस बात का कि यह प्रश्न क्यों सबसे पहले ख्याल में आता है? भीतर दबा हुआ सेक्स है। उस सेक्स के दमन की वजह से बाहर स्त्रियां और पुरुष अतिशय उभर कर दिखाई पड़ते हैं।

क्या आपने कभी सोचा? आप किसी आदमी का नाम भूल सकते हैं, जाति भूल सकते हैं, चेहरा भूल सकते हैं। अगर मैं आप से मिलूं या मुझे आप मिलें तो मैं सब भूल सकता हूं--कि आपका नाम क्या था, आपका चेहरा क्या था, आपकी जाति क्या थी, उम्र क्या थी, आप किस पद पर थे--सब भूल सकता हूं, लेकिन कभी आपको ख्याल आया कि आप यह भी भूल सके हैं कि जिससे आप मिले थे, वह आदमी था या औरत? कभी आप भूल सके इस बात को कि जिससे आप मिले थे, वह पुरुष है या स्त्री? कभी पीछे यह संदेह उठा मन में कि वह स्त्री है या पुरुष? नहीं, यह बात आप कभी भी नहीं भूल सके होंगे। क्यों लेकिन? जब सारी बातें भूल जाती हैं तो यह क्यों नहीं भूलता?

हमारे भीतर मन में कहीं सेक्स बहुत अतिशय होकर बैठा है। वह चौबीस घंटे उबल रहा है। इसलिए सब बात भूल जाती है, लेकिन यह बात नहीं भूलती। हम सतत सचेष्ट हैं।

यह पृथ्वी तब तक स्वस्थ नहीं हो सकेगी, जब तक आदमी और स्त्रियों के बीच यह दीवार और यह फासला खड़ा हुआ है। यह पृथ्वी तब तक कभी भी शांत नहीं हो सकेगी, जब तक भीतर उबलती हुई आग है और उसके ऊपर हम जबरदस्ती बैठे हुए हैं। उस आग को रोज दबाना पड़ता है। उस आग को प्रतिक्षण दबाए रखना पड़ता है। वह आग हमको भी जला डालती है, सारा जीवन राख कर देती है। लेकिन फिर भी हम विचार करने को राजी नहीं होते--यह आग क्या थी?

और मैं आपसे कहता हूं, अगर हम इस आग को समझ लें तो यह आग दुश्मन नहीं है, दोस्त है। अगर हम इस आग को समझ लें तो यह हमें जलाएगी नहीं, हमारे घर को गरम भी कर सकती है सर्दियों में, और हमारी रोटियां भी पका सकती है, और हमारी जिंदगी के लिए सहयोगी और मित्र भी हो सकती है। लाखों साल तक आकाश में बिजली चमकती थी। कभी किसी के ऊपर गिरती थी और जान ले लेती थी। कभी किसी ने सोचा भी न था कि एक दिन घर में पंखा चलाएगी यह बिजली। कभी यह रोशनी करेगी अंधेरे में, यह किसी ने सोचा नहीं था। आज? आज वही बिजली हमारी साथी हो गई है। क्यों? बिजली की तरफ हम आंख मूंद कर खड़े हो जाते तो हम कभी बिजली के राज को न समझ पाते और न कभी उसका उपयोग कर पाते। वह हमारी दुश्मन ही बनी रहती। लेकिन नहीं, आदमी ने बिजली के प्रति दोस्ताना भाव बरता। उसने बिजली को समझने की कोशिश की, उसने प्रयास किए जानने के। और धीरे-धीरे बिजली उसकी साथी हो गई। आज बिना बिजली के क्षण भर जमीन पर रहना मुश्किल मालूम होगा।

मनुष्य के भीतर बिजली से भी बड़ी ताकत है सेक्स की।

मनुष्य के भीतर अणु की शक्ति से भी बड़ी शक्ति है सेक्स की।

कभी आपने सोचा लेकिन, यह शक्ति क्या है और कैसे हम इसे रूपांतरित करें? एक छोटे से अणु में इतनी शक्ति है कि हिरोशिमा का पूरा का पूरा एक लाख का नगर भस्म हो सकता है। लेकिन क्या आपने कभी सोचा कि मनुष्य के काम की ऊर्जा का एक अणु एक नये व्यक्ति को जन्म देता है? उस व्यक्ति में गांधी पैदा हो सकता है, उस व्यक्ति में महावीर पैदा हो सकता है, उस व्यक्ति में बुद्ध पैदा हो सकते हैं, क्राइस्ट पैदा हो सकता है। उससे आइंस्टीन पैदा हो सकता है और न्यूटन पैदा हो सकता है। एक छोटा सा अणु एक मनुष्य की काम-ऊर्जा का, एक गांधी को छिपाए हुए है। गांधी जैसा विराट व्यक्तित्व जन्म पा सकता है।

लेकिन हम सेक्स को समझने को राजी नहीं! लेकिन हम सेक्स की ऊर्जा के संबंध में बात करने की हिम्मत जुटाने को राजी नहीं! कौन सा भय हमें पकड़े हुए है कि जिससे सारे जीवन का जन्म होता है उस शक्ति को हम समझना नहीं चाहते? कौन सा डर है? कौन सी घबराहट है?

मैंने पिछली बंबई की सभा में इस संबंध में कुछ बात की थी, तो बड़ी घबराहट फैल गई। मुझे बहुत से पत्र पहुंचे कि आप इस तरह की बातें मत कहें! इस तरह की बात ही मत करें! मैं बहुत हैरान हुआ कि इस तरह की बात क्यों न की जाए? अगर शक्ति है हमारे भीतर तो उसे जाना क्यों न जाए? उसे क्यों न पहचाना जाए? और बिना जाने-पहचाने, बिना उसके नियम समझे, हम उस शक्ति को और ऊपर कैसे ले जा सकते हैं! पहचान से हम उसको जीत भी सकते हैं, बदल भी सकते हैं। लेकिन बिना पहचाने तो हम उसके हाथ में ही मरेंगे और सड़ेंगे, और कभी उससे मुक्त नहीं हो सकते।

जो लोग सेक्स के संबंध में बात करने की मनाही करते हैं, वे ही लोग पृथ्वी को सेक्स के गड्ढे में डाले हुए हैं, यह मैं आपसे कहना चाहता हूं। जो लोग घबराते हैं और जो समझते हैं धर्म का सेक्स से कोई संबंध नहीं, वे खुद तो पागल हैं ही, वे सारी पृथ्वी को भी पागल बनाने में सहयोगी हो रहे हैं।

धर्म का संबंध मनुष्य की ऊर्जा के ट्रांसफॉर्मेशन से है। धर्म का संबंध मनुष्य की शक्ति को रूपांतरित करने से है। धर्म चाहता है कि मनुष्य के व्यक्तित्व में जो छिपा है, वह श्रेष्ठतम रूप से अभिव्यक्त हो जाए। धर्म चाहता है कि मनुष्य का जीवन निम्न से उच्च की एक यात्रा बने, पदार्थ से परमात्मा तक पहुंच जाए। लेकिन यह चाह तभी पूरी हो सकती है... हम जहां जाना चाहते हैं उस स्थान को समझना उतना उपयोगी नहीं, जितना उस स्थान को समझना उपयोगी है जहां हम खड़े हैं; क्योंकि वहीं से यात्रा शुरू करनी पड़ती है।

सेक्स है फैक्ट, सेक्स जो है वह तथ्य है मनुष्य के जीवन का। और परमात्मा? परमात्मा अभी दूर है। सेक्स हमारे जीवन का तथ्य है। इस तथ्य को समझ कर हम परमात्मा के सत्य तक यात्रा कर भी सकते हैं। लेकिन इसे बिना समझे एक इंच आगे नहीं जा सकते, कोल्हू के बैल की तरह इसी के आस-पास घूमते रहेंगे, इसी के आस-पास घूमते रहेंगे।

मैंने जो पिछली सभा में कुछ बातें कहीं तो मुझे ऐसा लगा कि जैसे हम जीवन की वास्तविकता को समझने की भी तैयारी नहीं दिखाते! तो फिर हम और क्या कर सकते हैं? और आगे क्या हो सकता है? फिर ईश्वर, परमात्मा की सारी बातें सांत्वना की, कोरी सांत्वना की बातें हैं और झूठी हैं। क्योंकि जीवन के परम सत्य, चाहे कितने ही नग्न हों, उन्हें जानना ही पड़ेगा, समझना ही पड़ेगा।

तो पहली बात तो यह जान लेनी जरूरी है कि मनुष्य का जन्म सेक्स से होता है। मनुष्य का सारा व्यक्तित्व सेक्स के अणुओं से बना हुआ है। मनुष्य का सारा प्राण सेक्स की ऊर्जा से भरा हुआ है। जीवन की ऊर्जा अर्थात् काम की ऊर्जा। यह जो काम की ऊर्जा है, यह जो सेक्स इनर्जी है, यह क्या है? यह क्यों हमारे जीवन को इतने जोर से आंदोलित करती है? क्यों हमारे जीवन को इतना प्रभावित करती है? क्यों हम घूम-घूम कर सेक्स के आस-पास, इर्द-गिर्द ही चक्कर लगाते हैं और समाप्त हो जाते हैं? कौन सा आकर्षण है इसका?

हजारों साल से ऋषि-मुनि इनकार कर रहे हैं, लेकिन आदमी प्रभावित नहीं हुआ मालूम पड़ता है। हजारों साल से वे कह रहे हैं कि मुख मोड़ लो इससे! दूर हट जाओ इससे! सेक्स की कल्पना और कामना छोड़ दो! चित्त से निकाल डालो ये सारे सपने! लेकिन आदमी के चित्त से ये सपने निकले नहीं हैं। निकल भी नहीं सकते हैं इस भांति। बल्कि मैं तो इतना हैरान हुआ हूं--इतना हैरान हुआ हूं मैं--वेश्याओं से भी मिला हूं, लेकिन वेश्याओं ने मुझसे सेक्स की बात नहीं की! उन्होंने आत्मा-परमात्मा के संबंध में पूछताछ की। और मैं साधु-संन्यासियों से भी मिलता हूं। वे जब भी अकेले में मिलते हैं, तो सिवाय सेक्स के और किसी बात के संबंध में पूछताछ नहीं करते। मैं बहुत हैरान हुआ! मैं हैरान हुआ हूं इस बात को जान कर कि साधु-संन्यासियों को, जो

निरंतर इसके विरोध में बोल रहे हैं, वे खुद भी चित्त के तल पर वहीं ग्रसित हैं, वहीं परेशान हैं! तो जनता में आत्मा-परमात्मा की बात करते हैं, लेकिन भीतर उनके भी समस्या वही है। होगी भी। स्वाभाविक है, क्योंकि हमने उस समस्या को समझने की ही चेष्टा नहीं की है। हमने उस ऊर्जा के नियम भी नहीं जानने चाहे। और हमने कभी यह भी नहीं पूछा कि मनुष्य का इतना आकर्षण क्यों है? कौन सिखाता है सेक्स आपको?

सारी दुनिया तो सिखाने के विरोध में सारे उपाय करती है। मां-बाप चेष्टा करते हैं कि बच्चे को पता न चल जाए। शिक्षक चेष्टा करते हैं। धर्म-शास्त्र चेष्टा करते हैं। कहीं कोई स्कूल नहीं, कहीं कोई यूनिवर्सिटी नहीं। लेकिन आदमी अचानक एक दिन पाता है कि सारे प्राण काम की आतुरता से भर गए हैं! यह कैसे हो जाता है? बिना सिखाए यह कैसे हो जाता है? सत्य की शिक्षा दी जाती है, प्रेम की शिक्षा दी जाती है, उसका तो कोई पता नहीं चलता। इस सेक्स का इतना प्रबल आकर्षण, इतना नैसर्गिक केंद्र क्या है? जरूर इसमें कोई रहस्य है और इसे समझना जरूरी है। तो शायद हम इससे मुक्त भी हो सकते हैं।

पहली बात तो यह कि मनुष्य के प्राणों में सेक्स का जो आकर्षण है, वह वस्तुतः सेक्स का आकर्षण नहीं है। मनुष्य के प्राणों में जो कामवासना है, वह वस्तुतः काम की वासना नहीं है। इसलिए हर आदमी काम के कृत्य के बाद पछताता है, दुखी होता है, पीड़ित होता है। सोचता है कि इससे मुक्त हो जाऊं, यह क्या है? लेकिन शायद आकर्षण कोई दूसरा है। और वह आकर्षण बहुत रिलीजस, बहुत धार्मिक अर्थ रखता है। वह आकर्षण यह है कि मनुष्य के सामान्य जीवन में सिवाय सेक्स की अनुभूति के वह कभी भी अपने गहरे से गहरे प्राणों में नहीं उतर पाता है। और किसी क्षण में कभी गहरे नहीं उतरता है। दुकान करता है, धंधा करता है, यश कमाता है, पैसे कमाता है, लेकिन एक अनुभव काम का, संभोग का, उसे गहरे से गहरे ले जाता है। और उसकी गहराई में दो घटनाएं घटती हैं।

एक--संभोग के अनुभव में अहंकार विसर्जित हो जाता है, ईगोलेसनेस पैदा हो जाती है। एक क्षण के लिए अहंकार नहीं रह जाता, एक क्षण को यह याद भी नहीं रह जाता कि मैं हूं। क्या आपको पता है, धर्म के श्रेष्ठतम अनुभव में मैं बिल्कुल मिट जाता है, अहंकार बिल्कुल शून्य हो जाता है! सेक्स के अनुभव में क्षण भर को अहंकार मिटता है। लगता है कि हूं या नहीं। एक क्षण को विलीन हो जाता है मेरापन का भाव।

दूसरी घटना घटती है: एक क्षण के लिए समय मिट जाता है, टाइमलेसनेस पैदा हो जाती है।

जीसस ने कहा है समाधि के संबंध में: देयर शैल बी टाइम नो लांगर। समाधि का जो अनुभव है, वहां समय नहीं रह जाता। वह कालातीत है। समय बिल्कुल विलीन हो जाता है। न कोई अतीत है, न कोई भविष्य--शुद्ध वर्तमान रह जाता है।

सेक्स के अनुभव में यह दूसरी घटना घटती है--न कोई अतीत रह जाता है, न कोई भविष्य। समय मिट जाता है, एक क्षण के लिए समय विलीन हो जाता है।

ये धार्मिक अनुभूति के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व हैं--ईगोलेसनेस, टाइमलेसनेस। ये दो तत्व हैं, जिनकी वजह से आदमी सेक्स की तरफ आतुर होता है और पागल होता है। वह आतुरता स्त्री के शरीर के लिए नहीं है पुरुष की, न पुरुष के शरीर के लिए स्त्री की है। वह आतुरता शरीर के लिए बिल्कुल भी नहीं है। वह आतुरता किसी और ही बात के लिए है। वह आतुरता है--अहंकार-शून्यता का अनुभव, समय-शून्यता का अनुभव। लेकिन समय-शून्य और अहंकार-शून्य होने के लिए आतुरता क्यों है? क्योंकि जैसे ही अहंकार मिटता है, आत्मा की झलक उपलब्ध होती है। जैसे ही समय मिटता है, परमात्मा की झलक उपलब्ध होती है।

एक क्षण को होती है यह घटना, लेकिन उस एक क्षण के लिए आदमी कितनी ही ऊर्जा, कितनी ही शक्ति खोने को तैयार है! शक्ति खोने के कारण पछताता है बाद में कि शक्ति क्षीण हुई, शक्ति का अपव्यय हुआ। और उसे पता है कि शक्ति जितनी क्षीण होती है, मौत उतनी करीब आती है।

कुछ पशुओं में तो एक ही संभोग के बाद नर की मृत्यु हो जाती है। कुछ कीड़े तो एक ही संभोग कर पाते हैं और संभोग करते ही करते समाप्त हो जाते हैं। अफ्रीका में एक मकड़ा होता है। वह एक ही संभोग कर पाता है और संभोग की हालत में ही मर जाता है। इतनी ऊर्जा क्षीण हो जाती है।

मनुष्य को यह अनुभव में आ गया बहुत पहले कि सेक्स का अनुभव शक्ति को क्षीण करता है, जीवन-ऊर्जा कम होती है और धीरे-धीरे मौत करीब आती है। पछताता है आदमी। लेकिन इतना पछताने के बाद फिर पाता है कि कुछ घड़ियों के बाद फिर वही आतुरता है। निश्चित ही इस आतुरता में कुछ और अर्थ है जो समझ लेना जरूरी है।

सेक्स की आतुरता में कोई रिलीजस अनुभव है, कोई आत्मिक अनुभव है। उस अनुभव को अगर हम देख पाएं तो हम सेक्स के ऊपर उठ सकते हैं। अगर उस अनुभव को हम न देख पाएं तो हम सेक्स में ही जीएं और मर जाएंगे। उस अनुभव को अगर हम देख पाएं... अंधेरी रात है और अंधेरी रात में बिजली चमकती है। बिजली की चमक अगर हमें दिखाई पड़ जाए और बिजली को अगर हम समझ लें, तो अंधेरी रात को हम मिटा भी सकते हैं। लेकिन अगर हम यह समझ लें कि अंधेरी रात के कारण बिजली चमकती है, तो फिर हम अंधेरी रात को और घना करने की कोशिश करेंगे, ताकि बिजली चमके।

सेक्स की घटना में बिजली चमकती है एक। वह सेक्स से अतीत है, ट्रांसेंड करती है, पार से आती है। उस पार के अनुभव को अगर हम पकड़ लें, तो हम सेक्स के ऊपर उठ सकते हैं, अन्यथा नहीं। लेकिन जो लोग सेक्स के विरोध में खड़े हो जाते हैं, वे अनुभव को समझ भी नहीं पाते कि वह अनुभव क्या है। वे कभी यह ठीक विश्लेषण भी नहीं कर पाते कि हमारी आतुरता किस चीज के लिए है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि संभोग का इतना आकर्षण क्षणिक समाधि के लिए है। और संभोग से आप उस दिन मुक्त होंगे, जिस दिन आपको समाधि बिना संभोग के मिलना शुरू हो जाएगी। उसी दिन संभोग से आप मुक्त हो जाएंगे, सेक्स से मुक्त हो जाएंगे। क्योंकि एक आदमी हजार रुपये खोकर थोड़ा सा अनुभव पाता हो; और कल हम उसे बता दें कि रुपये खोने की कोई जरूरत नहीं, इस अनुभव की तो खदानें भरी पड़ी हैं, तुम चलो इस रास्ते से और उस अनुभव को पा लो। तो फिर वह हजार रुपये खोकर उस अनुभव को खरीदने बाजार में नहीं जाएगा।

सेक्स जिस अनुभूति को लाता है, अगर वह अनुभूति किन्हीं और मार्गों से उपलब्ध हो सके, तो आदमी का चित्त सेक्स की तरफ बढ़ना अपने आप बंद हो जाता है। उसका चित्त एक नई दिशा लेना शुरू कर देता है। इसलिए मैं कहता हूं, जगत में समाधि का पहला अनुभव मनुष्य को सेक्स के अनुभव से ही उपलब्ध हुआ है।

लेकिन वह बहुत महंगा अनुभव है, वह अति महंगा अनुभव है। और दूसरे कारण हैं कि वह अनुभव कभी एक क्षण से ज्यादा गहरा नहीं हो सकता। एक क्षण को झलक मिलेगी और हम वापस अपनी जगह पर लौट आते हैं। एक क्षण को किसी लोक में उठ जाते हैं, किसी गहराई पर, किसी पीक एक्सपीरिएंस पर, किसी शिखर पर पहुंचना होता है। और हम पहुंच भी नहीं पाते और वापस गिर जाते हैं। जैसे समुद्र की एक लहर आकाश में उठती है--उठ भी नहीं पाती पहुंच भी नहीं पाती, हवाओं में, सिर उठा भी नहीं पाती और गिरना शुरू हो जाता है। ठीक हमारा सेक्स का अनुभव: बार-बार शक्ति को इकट्ठा करके हम उठने की चेष्टा करते हैं--किसी गहरे

जगत में, किसी ऊँचे जगत में--एक क्षण को हम उठ भी नहीं पाते और सब लहर बिखर जाती है, हम वापस अपनी जगह खड़े हो जाते हैं। और उतनी शक्ति और ऊर्जा को गंवा देते हैं।

लेकिन अगर सागर की लहर बर्फ का पत्थर बन जाए, जम जाए और बर्फ हो जाए, तो फिर उसे नीचे गिरने की कोई जरूरत नहीं है। आदमी का चित्त जब तक सेक्स की तरलता में बहता है, तब तक वापस उठता है, गिरता है; उठता है, गिरता है; सारा जीवन यही करता है। और जिस अनुभव के लिए इतना तीव्र आकर्षण है--ईगोलेसनेस के लिए, अहंकार शून्य हो जाए और मैं आत्मा को जान लूं; समय मिट जाए और मैं उसको जान लूं जो इटरनल है, जो टाइमलेस है; उसको जान लूं जो समय के बाहर है, अनंत और अनादि है--उसे जानने की चेष्टा में सारा जगत सेक्स के केंद्र पर घूमता रहता है।

लेकिन अगर हम इस घटना के विरोध में खड़े हो जाएं सिर्फ, तो क्या होगा? तो क्या हम उस अनुभव को पा लेंगे जो सेक्स से एक झलक की तरह दिखाई पड़ता था?

नहीं, अगर हम सेक्स के विरोध में खड़े हो जाते हैं तो सेक्स ही हमारी चेतना का केंद्र बन जाता है, हम सेक्स से मुक्त नहीं होते, उससे बंध जाते हैं। वह लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट काम शुरू कर देता है। फिर हम उससे बंध गए। फिर हम भागने की कोशिश करते हैं। और जितनी हम कोशिश करते हैं, उतने ही बंधते चले जाते हैं।

एक आदमी बीमार था और बीमारी कुछ उसे ऐसी थी कि दिन-रात उसे भूख लगती थी। सच तो यह है, उसे बीमारी कुछ भी न थी। भोजन के संबंध में उसने कुछ विरोध की किताबें पढ़ ली थीं। उसने पढ़ लिया था कि भोजन पाप है, उपवास पुण्य है। कुछ भी खाना हिंसा करना है। जितना वह यह सोचने लगा कि भोजन करना पाप है, उतना ही भूख को दबाने लगा; जितना भूख को दबाने लगा, उतनी भूख असर्ट करने लगी, जोर से प्रकट होने लगी। तो वह दो-चार दिन उपवास करता था और एक दिन पागल की तरह कुछ भी खा जाता था। जब कुछ भी खा लेता था तो बहुत दुखी होता था, क्योंकि फिर खाने की तकलीफ झेलनी पड़ती थी। फिर पश्चात्ताप में दो-चार दिन उपवास करता था और फिर कुछ भी खा लेता था। आखिर उसने तय किया कि यह घर रहते हुए नहीं हो सकेगा ठीक, मुझे जंगल चले जाना चाहिए।

वह पहाड़ पर गया। एक हिल स्टेशन पर जाकर एक कमरे में रहा। घर के लोग भी परेशान हो गए थे। उसकी पत्नी ने यह सोच कर कि शायद वह पहाड़ पर अब जाकर भोजन की बीमारी से मुक्त हो जाएगा, उसने खुशी में बहुत से फूल उसे पहाड़ पर भिजवाए--कि मैं बहुत खुश हूं कि तुम शायद पहाड़ से अब स्वस्थ होकर वापस लौटोगे; मैं शुभकामना के रूप में ये फूल तुम्हें भेज रही हूं।

उस आदमी का वापस तार आया। उसने तार में लिखा--मेनी थैंक्स फॉर दि फ्लावर्स, दे आर सो डिलीशियस। उसने तार किया कि बहुत धन्यवाद फूलों के लिए, बड़े स्वादिष्ट हैं।

वह फूलों को खा गया, वहां पहाड़ पर जो फूल उसको भेजे गए थे! अब कोई आदमी फूलों को खाएगा, इसका हम ख्याल नहीं कर सकते। लेकिन जो आदमी भोजन से लड़ाई शुरू कर देगा, वह फूलों को खा सकता है।

आदमी सेक्स से लड़ाई शुरू किया, और उसने क्या-क्या सेक्स के नाम पर खाया, इसका आपने कभी हिसाब लगाया? आदमी को छोड़ कर, सभ्य आदमी को छोड़ कर, होमोसेक्सुअलिटी कहीं है? जंगल में आदिवासी रहते हैं, उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की है कि होमोसेक्सुअलिटी जैसी चीज भी हो सकती है--कि पुरुष और पुरुष के साथ संभोग कर सकते हैं, यह भी हो सकता है! यह कल्पना के बाहर है। मैं आदिवासियों के पास रहा हूं और उनसे मैंने कहा कि सभ्य लोग इस तरह भी करते हैं। वे कहने लगे, हमारे विश्वास के बाहर है। यह कैसे हो सकता है?

लेकिन अमेरिका में उन्होंने आंकड़े निकाले हैं--पैंतीस प्रतिशत लोग होमोसेक्सुअल हैं! और बेल्जियम और स्वीडन और हालैंड में होमोसेक्सुअल्स के क्लब हैं, सोसाइटीज हैं, अखबार निकलते हैं। और वे सरकार से यह दावा करते हैं कि होमोसेक्सुअलिटी के ऊपर से कानून उठा दिया जाना चाहिए, क्योंकि चालीस प्रतिशत लोग जिसको मानते हैं, तो इतनी बड़ी माइनोरिटी के ऊपर हमला है यह आपका। हम तो मानते हैं कि होमोसेक्सुअलिटी ठीक है, इसलिए हमको हक होना चाहिए।

कोई कल्पना नहीं कर सकता कि यह होमोसेक्सुअलिटी कैसे पैदा हो गई? सेक्स के बाबत लड़ाई का यह परिणाम है। जितना सभ्य समाज है, उतनी वेश्याएं हैं! कभी आपने यह सोचा कि ये वेश्याएं कैसे पैदा हो गई? किसी आदिवासी गांव में जाकर वेश्या खोज सकते हैं आप? आज भी बस्तर के गांव में वेश्या खोजनी मुश्किल है। और कोई कल्पना में भी मानने को राजी नहीं होता कि ऐसी स्त्रियां हो सकती हैं जो कि अपनी इज्जत बेचती हों, अपना संभोग बेचती हों। लेकिन सभ्य आदमी जितना सभ्य होता चला गया, उतनी वेश्याएं बढ़ती चली गईं। क्यों?

यह फूलों को खाने की कोशिश शुरू हुई है। और आदमी की जिंदगी में कितने विकृत रूप से सेक्स ने जगह बनाई है, इसका अगर हम हिसाब लगाने चलेंगे तो हम हैरान रह जाएंगे कि यह आदमी को क्या हुआ है? इसका जिम्मा किस पर है, किन लोगों पर है?

इसका जिम्मा उन लोगों पर है, जिन्होंने आदमी को सेक्स को समझना नहीं, लड़ना सिखाया है। जिन्होंने सप्रेषन सिखाया है, जिन्होंने दमन सिखाया है। दमन के कारण सेक्स की शक्ति जगह-जगह से फूट कर गलत रास्तों से बहनी शुरू हो गई है। सारा समाज पीड़ित और रुग्ण हो गया है।

इस रुग्ण समाज को अगर बदलना है, तो हमें यह स्वीकार कर लेना होगा कि काम की ऊर्जा है, काम का आकर्षण है। क्यों है काम का आकर्षण? काम के आकर्षण का जो बुनियादी आधार है, उस आधार को अगर हम पकड़ लें, तो मनुष्य को हम काम के जगत से ऊपर उठा सकते हैं। और मनुष्य निश्चित काम के जगत के ऊपर उठ जाए, तो ही राम का जगत शुरू होता है।

खजुराहो के मंदिर के सामने मैं खड़ा था और दस-पांच मित्रों को लेकर वहां गया था। खजुराहो के मंदिर के चारों तरफ की दीवाल पर तो मैथुन-चित्र हैं, कामवासनाओं की मूर्तियां हैं। मेरे मित्र कहने लगे कि मंदिर के चारों तरफ यह क्या है? मैंने उनसे कहा, जिन्होंने यह मंदिर बनाया था, वे बड़े समझदार लोग थे। उनकी मान्यता यह थी कि जीवन की बाहर की परिधि पर काम है। और जो लोग अभी काम से उलझे हैं, उनको मंदिर में भीतर प्रवेश का कोई हक नहीं है।

फिर मैं अपने मित्रों को कहा, भीतर चलें! फिर उन्हें भीतर लेकर गया। वहां तो कोई काम-प्रतिमा न थी, वहां भगवान की मूर्ति थी। वे कहने लगे, भीतर कोई प्रतिमा नहीं है! मैंने उनसे कहा कि जीवन की बाहर की परिधि पर कामवासना है। जीवन की बाहर की परिधि, दीवाल पर कामवासना है। जीवन के भीतर भगवान का मंदिर है। लेकिन जो अभी कामवासना से उलझे हैं, वे भगवान के मंदिर में प्रवेश के अधिकारी नहीं हो सकते, उन्हें अभी बाहर की दीवाल का ही चक्कर लगाना पड़ेगा। जिन लोगों ने यह मंदिर बनाया था, वे बड़े समझदार लोग थे। यह मंदिर एक मेडिटेशन सेंटर था। यह मंदिर एक ध्यान का केंद्र था। जो लोग आते थे, उनसे वे कहते थे, बाहर पहले मैथुन के ऊपर ध्यान करो, पहले सेक्स को समझो! और जब सेक्स को पूरी तरह समझ जाओ और तुम पाओ कि मन उससे मुक्त हो गया है, तब तुम भीतर आ जाना। फिर भीतर भगवान से मिलना हो सकता है।

लेकिन धर्म के नाम पर हमने सेक्स को समझने की स्थिति पैदा नहीं की, सेक्स की शत्रुता पैदा कर दी! सेक्स को समझो मत, आंख बंद कर लो, और घुस जाओ भगवान के मंदिर में आंख बंद करके।

आंख बंद करके कभी कोई भगवान के मंदिर में जा सका है? और आंख बंद करके अगर आप भगवान के मंदिर में पहुंच भी गए, तो बंद आंख में आपको भगवान दिखाई नहीं पड़ेंगे, जिससे आप भाग कर आए हैं वही दिखाई पड़ता रहेगा, आप उसी से बंधे रह जाएंगे।

शायद कुछ लोग मेरी बातें सुन कर समझते हैं कि मैं सेक्स का पक्षपाती हूं। मेरी बातें सुन कर शायद लोग समझते हैं कि मैं सेक्स का प्रचार करना चाहता हूं। अगर कोई ऐसा समझता हो तो उसने मुझे कभी सुना ही नहीं है, ऐसा उससे कह देना। इस समय पृथ्वी पर मुझसे ज्यादा सेक्स का दुश्मन आदमी खोजना मुश्किल है। और उसका कारण यह है कि मैं जो बात कह रहा हूं, अगर वह समझी जा सकी, तो मनुष्य-जाति को सेक्स के ऊपर उठाया जा सकता है, अन्यथा नहीं। और जिन थोथे लोगों को हमने समझा है कि वे सेक्स के दुश्मन थे, वे सेक्स के दुश्मन नहीं थे। उन्होंने सेक्स में आकर्षण पैदा कर दिया, सेक्स से मुक्ति पैदा नहीं की। सेक्स में आकर्षण पैदा हो गया विरोध के कारण।

मुझसे एक आदमी ने कहा है कि जिस चीज का विरोध न हो, उसको करने में कोई रस ही नहीं रह जाता। चोरी के फल खाने जितने मधुर और मीठे होते हैं, उतने बाजार से खरीदे गए फल कभी नहीं होते। इसीलिए अपनी पत्नी उतनी मधुर कभी नहीं मालूम पड़ती, जितनी पड़ोसी की पत्नी मालूम पड़ती है। वे चोरी के फल हैं, वे वर्जित फल हैं। और सेक्स को हमने एक ऐसी स्थिति दे दी, एक ऐसा चोरी का जामा पहना दिया, एक ऐसे झूठ के लिबास में छिपा दिया, ऐसी दीवारों में खड़ा कर दिया, कि उसने हमें तीव्र रूप से आकर्षित कर लिया है।

बर्ट्रेड रसेल ने लिखा है कि जब मैं छोटा बच्चा था, विक्टोरियन जमाना था, स्त्रियों के पैर भी दिखाई नहीं पड़ते थे। वे कपड़े पहनती थीं, जो जमीन पर घिसटता था और पैर नहीं दिखाई पड़ता था। अगर कभी किसी स्त्री का अंगूठा दिख जाता था, तो आदमी आतुर होकर अंगूठा देखने लगता था और कामवासना जग जाती थी! और रसेल कहता है कि अब स्त्रियां करीब-करीब आधी नंगी घूम रही हैं और उनका पैर पूरा दिखाई पड़ता है, लेकिन कोई असर नहीं होता!

तो रसेल ने लिखा है कि इससे यह सिद्ध होता है कि हम जिन चीजों को जितना ज्यादा छिपाते हैं, उन चीजों में उतना ही कुत्सित आकर्षण पैदा होता है।

अगर दुनिया को सेक्स से मुक्त करना है, तो बच्चों को ज्यादा देर तक घर में नग्न रहने की सुविधा होनी चाहिए। जब तक बच्चे घर में नग्न खेल सकें--लड़के और लड़कियां--उन्हें नग्न खेलने देना चाहिए। ताकि वे एक-दूसरे के शरीर से भली-भांति परिचित हो जाएं और कल रास्तों पर उनको किसी स्त्री को धक्का देने की कोई जरूरत न रह जाए। ताकि वे एक-दूसरे के शरीर से इतने परिचित हो जाएं कि किसी किताब पर नंगी औरत की तस्वीर छापने की कोई जरूरत न रह जाए। वे शरीर से इतने परिचित हों कि शरीर का कुत्सित आकर्षण विलीन हो सके।

लेकिन बड़ी उलटी दुनिया है। जिन लोगों ने शरीर को ढांक कर, छिपा कर खड़ा किया है, उन्हीं लोगों ने शरीर को इतना आकर्षित बना दिया है, यह हमारे ख्याल में नहीं आता! जिन लोगों ने शरीर को जितना ढांक कर छिपा दिया है, शरीर को उतना ही हमारे मन में चिंतन का विषय बना दिया है, यह हमारे ख्याल में नहीं आता।

बच्चे नग्न होने चाहिए, देर तक नग्न खेलने चाहिए, लड़के और लड़कियां एक-दूसरे को नग्नता में देखना चाहिए, ताकि उनके पीछे कोई भी पागलपन न रह जाए और उनके इस पागलपन का जीवन भर रोग उनके भीतर न चलता रहे। लेकिन वह रोग चल रहा है। और उस रोग को हम बढ़ाते चले जाते हैं। और उस रोग के फिर हम नये-नये रास्ते खोजते हैं।

गंदी किताबें छपती हैं, जो लोग गीता के कवर में भीतर रख कर पढ़ते हैं। बाइबिल में दबा लेते हैं, और पढ़ते हैं। ये गंदी किताबें... तो हम कहते हैं, ये गंदी किताबें बंद होनी चाहिए! लेकिन हम यह कभी नहीं पूछते कि गंदी किताबें पढ़ने वाला आदमी पैदा क्यों हो गया है? हम कहते हैं, नंगी तस्वीरें दीवारों पर नहीं लगनी चाहिए! लेकिन हम कभी नहीं पूछते कि नंगी तस्वीरें कौन आदमी देखने को आता है?

वही आदमी आता है जो स्त्रियों के शरीर को देखने से वंचित रह गया है। एक कुतूहल जाग गया है--क्या है स्त्री का शरीर? और मैं आपसे कहता हूं, वस्त्रों ने स्त्री के शरीर को जितना सुंदर बना दिया है, उतना सुंदर स्त्री का शरीर है नहीं। वस्त्रों में ढांक कर शरीर छिपा नहीं है और उघड़ कर प्रकट हुआ है। यह सारी की सारी चिंतना हमारी विपरीत फल ले आई है।

इसलिए आज एक बात आपसे कहना चाहता हूं पहले दिन की चर्चा में, वह यह--सेक्स क्या है? उसका आकर्षण क्या है? उसकी विकृति क्यों पैदा हुई है? अगर हम ये तीन बातें ठीक से समझ लें, तो मनुष्य का मन इनके ऊपर उठ सकता है। उठना चाहिए। उठने की जरूरत है।

लेकिन उठने की चेष्टा गलत परिणाम लाई है; क्योंकि हमने लड़ाई खड़ी की है, हमने मैत्री खड़ी नहीं की। दुश्मनी खड़ी की है, सप्रेषण खड़ा किया है, दमन किया है; समझ पैदा नहीं की।

अंडरस्टैंडिंग चाहिए, सप्रेषण नहीं। समझ चाहिए। जितनी गहरी समझ होगी, मनुष्य उतना ही ऊपर उठता है। जितनी कम समझ होगी, उतना ही मनुष्य दबाने की कोशिश करता है। और दबाने के कभी भी कोई सफल परिणाम, सुफल परिणाम, स्वस्थ परिणाम उपलब्ध नहीं होते।

मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी ऊर्जा है काम। लेकिन काम पर रुक नहीं जाना है; काम को राम तक ले जाना है। सेक्स को समझना है, ताकि ब्रह्मचर्य फलित हो सके। सेक्स को जानना है, ताकि हम सेक्स से मुक्त हो सकें और ऊपर उठ सकें।

लेकिन शायद ही, आदमी जीवन भर अनुभव से गुजरता है, शायद ही उसने समझने की कोशिश की हो कि संभोग के भीतर समाधि का क्षण भर का अनुभव है। वही अनुभव खींच रहा है। वही अनुभव आकर्षित कर रहा है। वही अनुभव पुकार दे रहा है कि आओ। ध्यानपूर्वक उस अनुभव को जान लेना है कि कौन सा अनुभव मुझे आकर्षित कर रहा है? कौन मुझे खींच रहा है?

और मैं आपसे कहता हूं, उस अनुभव को पाने के सुगम रास्ते हैं। ध्यान, योग, सामायिक, प्रार्थना, सब उस अनुभव को पाने के मार्ग हैं। लेकिन वही अनुभव हमें आकर्षित कर रहा है, यह सोच लेना, जान लेना जरूरी है।

एक मित्र ने मुझे लिखा कि आपने ऐसी बातें कहीं, कि मां के साथ बेटी बैठी थी, वह सुन रही है! बाप के साथ बेटी बैठी है, वह सुन रही है! ऐसी बातें सबके सामने नहीं करनी चाहिए।

मैंने उनसे कहा, आप बिल्कुल पागल हैं। अगर मां समझदार होगी, तो इसके पहले कि बेटी सेक्स की दुनिया में उतर जाए, उसे सेक्स के संबंध में अपने सारे अनुभव समझा देगी। ताकि वह अनजान, अधकच्ची, अपरिपक्व सेक्स के गलत रास्तों पर न चली जाए। अगर बाप योग्य है और समझदार है, तो अपने बेटे को और

अपनी बेटी को अपने सारे अनुभव बता देगा। ताकि बेटे और बेटियां गलत रास्तों पर न चले जाएं, जीवन उनके विकृत न हो जाएं।

लेकिन मजा यह है कि न बाप का कोई गहरा अनुभव है, न मां का कोई गहरा अनुभव है। वे खुद भी सेक्स के तल से ऊपर नहीं उठ सके। इसलिए घबराते हैं कि कहीं सेक्स की बात सुन कर बच्चे भी इसी तल में न उलझ जाएं। लेकिन मैं उनसे पूछता हूं, आप किसकी बात सुन कर उलझे थे? आप अपने आप उलझ गए थे, बच्चे भी अपने आप उलझ जाएंगे। यह हो भी सकता है कि अगर उन्हें समझ दी जाए, विचार दिया जाए, बोध दिया जाए, तो शायद वे अपनी ऊर्जा को व्यर्थ करने से बच सकें, ऊर्जा को बचा सकें, रूपांतरित कर सकें।

रास्ते के किनारे पर कोयले का ढेर लगा होता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि कोयला ही हजारों साल में हीरा बन जाता है। कोयले और हीरे में कोई रासायनिक फर्क नहीं है, कोई केमिकल भेद नहीं है। कोयले के भी परमाणु वही हैं जो हीरे के हैं; कोयले का भी रासायनिक-भौतिक संगठन वही है जो हीरे का है। हीरा कोयले का ही रूपांतरित, बदला हुआ रूप है। हीरा कोयला ही है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि सेक्स कोयले की तरह है, ब्रह्मचर्य हीरे की तरह है। लेकिन वह कोयले का ही बदला हुआ रूप है। वह कोयले का दुश्मन नहीं है हीरा। वह कोयले की ही बदलाहट है। वह कोयले का ही रूपांतरण है। वह कोयले को ही समझ कर नई दिशाओं में ले गई यात्रा है। सेक्स का विरोध नहीं है ब्रह्मचर्य, सेक्स का ही रूपांतरण है, ट्रांसफॉर्मेशन है। और जो सेक्स का दुश्मन है, वह कभी ब्रह्मचर्य को उपलब्ध नहीं हो सकता है।

ब्रह्मचर्य की दिशा में जाना हो--और जाना जरूरी है, क्योंकि ब्रह्मचर्य का मतलब क्या है? ब्रह्मचर्य का इतना मतलब है: वह अनुभव उपलब्ध हो जाए, जो ब्रह्म की चर्या जैसा है। जैसा भगवान का जीवन हो, वैसा जीवन उपलब्ध हो जाए। ब्रह्मचर्य यानी ब्रह्म की चर्या, ब्रह्म जैसा जीवन। परमात्मा जैसा अनुभव उपलब्ध हो जाए।

वह हो सकता है अपनी शक्तियों को समझ कर रूपांतरित करने से।

आने वाले दो दिनों में, कैसे रूपांतरित किया जा सकता है सेक्स, कैसे रूपांतरित हो जाने के बाद काम राम के अनुभव में बदल जाता है, वह मैं आपसे बात करूंगा। और तीन दिन तक चाहूंगा कि बहुत गौर से सुन लेंगे, ताकि मेरे संबंध में कोई गलतफहमी पीछे आपको पैदा न हो जाए। और जो भी प्रश्न हों--ईमानदारी से और सच्चे--उन्हें लिख कर दे देंगे, ताकि आने वाले पिछले दो दिनों में मैं उनकी आप से सीधी-सीधी बात कर सकूं। किसी प्रश्न को छिपाने की जरूरत नहीं है। जो जिंदगी में सत्य है, उसे छिपाने का कोई कारण नहीं है। किसी सत्य से मुकरने की जरूरत नहीं है। जो सत्य है, वह सत्य है--चाहे हम आंख बंद करें, चाहे आंख खुली रखें।

और एक बात मैं जानता हूं, धार्मिक आदमी मैं उसको कहता हूं जो जीवन के सारे सत्यों को सीधा साक्षात्कार करने की हिम्मत रखता है। जो इतने कमजोर, काहिल और नपुंसक हैं कि जीवन के तथ्यों का सामना भी नहीं कर सकते, उनके धार्मिक होने की कोई उम्मीद कभी नहीं हो सकती है।

ये आने वाले चार दिनों के लिए निमंत्रण देता हूं। क्योंकि ऐसे विषय पर यह बात है कि शायद ऋषि-मुनियों से आशा नहीं रही है कि ऐसे विषयों पर वे बात करेंगे। शायद आपको सुनने की आदत भी नहीं होगी। शायद आपका मन डरेगा। लेकिन फिर भी मैं चाहूंगा कि इन पांच दिनों में आप ठीक से सुनने की कोशिश करेंगे।

यह हो सकता है कि काम की समझ आपको राम के मंदिर के भीतर प्रवेश दिला दे। आकांक्षा मेरी यही है। परमात्मा करे वह आकांक्षा पूरी हो।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उसके लिए अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।